Chapter-1

प्रथम अध्याय **गोविन्द मिश्र का जीवन और व्यक्तित्व**

जन्म, बाल्यावस्था, शिक्षा-दीक्षा, विवाह, नौकरी,

साहित्य सर्जन तथा समग्र रूप से व्यक्तित्व ।

गोविन्द मिश्र का जीवन और व्यक्तित्व

सृष्टिकर्त्ता परमपिता परमेश्वर की लीला अति विचित्र अवर्णनीय और अदृश्य है । कहा नहीं जा सकता कि वह अपनी लीला किस अंश में, किस रूप में और कहाँ प्रदर्शित करें । वैसे मानव ईश्वरीय सृष्टि का सर्वाधिक बुद्धिमान प्राणी है । यों तो आहार, निद्रा, भय और मैथुन (सन्तानोत्पत्ति) सभी प्राणियों में सामान्य रूप से दृष्टिगत होती है, किन्तु साहित्य, संगीत और कला से विहीन मनुष्य पुच्छ – विषाण – रहित प्राणी माना गया है । किसी संस्कृत कवि ने सही ही कहा है –

आहमृनिद्रा भयमैथुनअ्य,
सामान्यमेतद् पशुभिर्नराणाम् ।
अपिच – साहित्य संगीतकलाविहीन :
साक्षात्पशुपुच्छविषाण हीन : ।

सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ बुद्धि सम्पन्न प्राणी होने के नाते मनुष्य ने ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में जो अपने अनुपम, अपूर्व और अद्वितीय अनुभव जगत में प्रस्तुत किये हैं वे अद्यावधि हमारे और हमारी भावी पीढ़ी के लिए प्रेरणास्रोत बने हुए हैं । माँ सरस्वती को बुद्धि की अधिष्ठात्री देवी कहकर पूजा जाता है । उसके विषय में ही यही कहा जाता है कि पता नहीं उनकी किस पर कब कृपा हो जाय । वे क्षणभर में मूक को पंडित बनाने की सामर्थ्य रखती है । सत्यमुक्तम् –

यत्कृपालवमाश्रेण मूको भवति पण्डितः ।
वेदशास्त्रशरीरां ता वाणीं वीणाकरां भजे ।।

माँ वीणापणि की अनिर्वाच्य कृपा से इस धराधाम पर ऐसे मंत्रदृष्टा ऋषि–महर्षि, महान कवि और साहित्यकार हो गये हैं जिनकी अमृतमयी वाणी ने पाठकों को सराबोर कर उनका हृद्य निर्मल और पवित्र कर दिया । वेद–पुराण कर्ता ऋषिगणु, आदि कवि वाल्मीकि,

महर्षि वेद–व्यास, सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार कवि कुलशिरोमणि कालिदास, हिन्दी साहित्याकाश के देदी प्यमान नक्षत्र सन्तशिरोमणि एवं महाकवि तुलसीदास, कृष्णदास, कृष्णभक्त कवि सूरदास, आधुनिक हिन्दी के मूर्धन्य एवं महाकवि जयशंकर प्रसाद, अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध" राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, सुमित्रानन्दन् पन्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, श्रीमती महादेवी वर्मा, उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द, प्रसिद्ध कथाकार/~~कहानीक्रम~~ प्रसाद, प्रेम चन्द, जैनेन्द्र, आदि–आदि आज हमारे मार्गदर्शक हैं । अनेकानेक साहित्यकारों द्वारा प्रणीत विविध–विधि साहित्य आज अनेक विधि हमारा ज्ञान संवर्द्धन, मार्गदर्शन और मनोरंजन कर रहा है । इसी श्रेणी में, कथाकारों और उपन्यासकारों की परम्परा में एक नया नाम और जुड़ गया है – गोविन्द मिश्र का ।

आधुनिक हिन्दी साहित्य के निरन्तर प्रगतिशील उपन्यासकार, कहानीकार, यात्रा–साहित्य रचयिता गोविन्द मिश्र ने अपनी समृद्ध और सशक्त लेखनी तथा अद्वितीय प्रतिभा के बल से हिन्दी साहित्य को पर्याप्त समृद्ध किया है । उन्होंने हिन्दी गद्य की कई विधाओं, यथा–कहानी, उपन्यास, यात्रा, निबन्ध आदि–पर अपनी लेखनी चलाई है । अपने जीवन के विविध कटु अनुभवों एवम् अनुभूतियों को लेखक गोविन्द मिश्र ने जीवन्त रूप में अपने लेखन में प्रस्फुटित किया है । इनके विपुल साहित्य के अनुशीलन के आधार पर हम इनके जीवन को–व्यक्तित्व को–सुख–दु:ख से समन्वित, सहज गम्भीर प्रकृति की अनुभूति भी कह सकते हैं । मिश्र जी के प्रतिभा युक्त व्यक्तित्व में व्यापकता है , विविधता है और विचित्रता । उनका व्यक्तित्व अत्यन्त जटिल और बहुत से अन्त:र्बाह्य विरोधों का सामंजस्यपूर्ण संकलन है । इस विरोधपूर्ण सामंजस्य का मूल कारण उनकी अपनी प्रारम्भिक पारिवारिक, आर्थिक विषय परिस्थितियाँ ही मानी जा सकती हैं, जैसा कि उन्होंने स्वयं लिखा है – "कुछ यह ....कुछ यह कि हमारे माँ–बाप ने बहुत ही कष्ट से हम लोगों को पढ़ाया था । ऊपर लाये थे । प्राइमरी स्कूल के अध्यापक अध्यापिका थे मेरे माँ–बाप । किसी तरह चल जाता था ।[1] और भी – हाँ, वह सब था लेकिन मैंने कहा न कि मैं अपने

---

1. लेखक की जमीन = (जब जैसे जो होता चला ....) से पृष्ठ 89.

माँ–बाप को जिन्होंने परिवार के लिए इतना कष्ट उठाया था, उन्हें ठेस नहीं पहुँचाना चाहता था।[1]

गोविन्द मिश्र के माता–पिता प्राचीन भारतीय परम्परा के रूढ़िवादी अनुयायी थे । पिताजी माँ को एक जागीर समझते थे, और फलतः पारिवारिक कलह उत्पन्न हो जाता था, जिससे कभी–कभी वे आपस में बोलना भी बन्द कर देते थे । इसके पिता इनकी माता पर असहनीय अत्याचार भी कर बैठते थे, किन्तु वे उसे पत्नी धर्म और स्त्री–कर्तव्य समझकर सहन कर लेती थीं । मिश्र जी खुले हृदय के व्यक्ति हैं, इसीलिए इन्होंने अपनी कृतियों में वास्तविकता और यथार्थता को खुले रूप से प्रस्तुत करने का पूर्ण प्रयास किया है । असलियत को कहने में इन्होंने कोई झिझक या संकोच नहीं किया है । अपनी कहानियों में उन्होंने खुलेपन को अपनाया है और यह भी स्पष्ट किया है कि हमारे पिता एक साहित्य ही हैं उनपर मैंने बहुत कहानियाँ लिखी हैं । उनकी बहुत भाषा पकड़ने की कोशिश की ।[2]

जन्म और बाल्यावस्था :

गोविन्द मिश्र के जन्म और बाल्यावस्था के विषय में इनके साहित्य एवं अनेकानेक साहित्यकारों द्वारा लिए गये इनके साक्षात्कार से पर्याप्त जानकारी उपलब्ध हो जाती है । इनके साहित्य को प्रकाशित करने वाले अनेक प्रकाशकों ने इनकी रचनाओं के अन्त में आवरण–पृष्ठ पर इनकी जन्म तिथि भी अंकित की है जिसके आधार पर स्पष्ट प्रमाणित होता है कि इनका जन्म एक (1) अगस्त सन् उन्नीस सौ उन्तालीस (1/8/1939) को उत्तर प्रदेश राज्य के बाँदा जिले के अतर्रा कस्बे में हुआ था । साक्ष्य रुप में ये तथ्य विद्यमान है –

अतर्रा (बाँदा) में 1 अगस्त, 1939 को जन्मे और बुन्देल खण्ड की "लाल–पीली जमीन" में बड़े हुए गोविन्द मिश्र को सृजनात्मकता प्रयाग की साहित्यिक व सांस्कृतिक मिट्टी से मिली ।"[3]

---

1. लेखक की जमीन = (जब जैसे जो होता चला....) से पृष्ठ 94
2. वही पृष्ठ 90.
3. अर्थ–ओझल–भारतीय ज्ञानपीठ–दिल्ली से प्रकाशित–के आवरण–पृष्ठ के अन्त में ।

"कथाभूमि" संग्रह के आवरण पृष्ठ के अन्त में –
जन्म – 1 अगस्त 1939, अतर्रा (बाँदा), उत्तर प्रदेश ।"

ऐसा ही उल्लेख "रगड़ खाती आत्म हत्याएँ" कहानी–संग्रह के अन्त में मिलता है । "लेखक की जमीन" नाम से प्रकाशित साक्षात्कार "संकलन" में दो–तीन साक्षात्कार कर्ताओं के साथ चले प्रश्नोत्तर में इन्होंने अपने जन्म और बाल्यावस्था का उल्लेख स्वयं किया है, यथा - "आन्दोलन में भाग लेने से ही कोई बड़ा लेखक नहीं बनता" शीर्षक के अर्न्तगत गंगा प्रसाद जी के साथ हुए साक्षात्कार में इन्होंने उनके प्रश्न– मिश्र जी, सबसे पहले तो आप अपने जन्म, स्थान, शिक्षा और लेखन कार्यो के बारे में कुछ ज़ानकारी दें । के उत्तर में कहा है – "1 अगस्त 1939 को अतर्रा (बाँदा) उत्तर प्रदेश में पैदा हुआ । प्रारम्भिक शिक्षा पुरानी स्टेट चरखारी में जो आजकल जिला हमीरपुर में है और माध्यमिक शिक्षा बाँदा में हुई ।[1]

"साहित्य की आत्मा का बसेरा कहा है, शीर्षक में राजकुमार गौतम एवं बलराम के साथ हुए साक्षात्कार में संकेत किया गया है – गोविन्द (जन्म: 1939) आजकल पचासा की ओर बढ़ रहे हैं ।"[2]

इस प्रकार सिद्ध होता है कि गोविन्द मिश्र का जन्म एक अगस्त सन् उन्नीस सौ उन्तालीस ईसवीं में उत्तर प्रदेश में बाँदा जनपद के अर्न्तगत अतर्रा में हुआ था ।

अन्त: साक्ष्य के आधार पर जैसी जानकारी गोविन्द मिश्र के जन्म के विषय में मिलती है, वैसी ही इनकी बाल्यावस्था के विषय में भी । उपलब्ध तथ्यों के आधार पर ज्ञात होता है कि मिश्र जी का बचपन कष्ट और आर्थिक अभाव में व्यतीत हुआ था । इनके माता–पिता सामान्य श्रेणी के अध्यापक–अध्यापिका ही तो थे, वह भी प्राइमरी पाठशाला के । इनकी तीन बहनें और एक भाई है । इनका लालन-पालन आर्थिक अभावों के अन्दर हुआ था । इन्हें पिता के कठोर स्वभाव का शिकार होना पड़ा था, जिसके कारण ये अर्न्तमुखी भी बन गये । पिता की कठोरता और पारिवारिक कलहपूर्ण वातावरण का उल्लेख मिश्र जी ने स्वयं किया है । पास–पड़ोस का

---

1. लेखक की जमीन – पृष्ठ 48
2. वही पृष्ठ 61

वातावरण भी कलहपूर्ण था । फिर भी इन्होंने अपनी शिक्षा–व्यवस्था अच्छी बनाये रखी, जिसके फलस्वरुप ये उच्च अधिकारी बन गए । इनकी बाल्यावस्था पर प्रकाश इन पंक्तियों में डाला गया है – "उस [गोविन्द मिश्र] का शैशवचर खैरी राज्य में बीता, किशोरावस्था बाँदा में और युवावस्था इलाहाबाद में 1

उनका शैशवकाल चरखारी राज्य का स्वर्ण युग था । उस राजसी ठाट–बाट की सुखद स्मृतियाँ संजोये यह बालक विद्याध्ययन के लिए बाँदा आया । उसकी ननिहाल मेरे पड़ोस में थी। ..... माँ शिक्षिका थी, उन्हें इस अवस्था तक पहुँचने में तत्कालीन अनेक सामाजिक अभिशाप झेलने पड़े थे । लेकिन यह परिश्रम ही इनकी पूँजी और शक्ति बना । यह बालक मृग–शावक की भाँति इधर–उधर दौड़ता–भागता छलाँगे भरकर परिस्थिति और परिवेश से परिचित होता जाता था ।[1]

गोविन्द मिश्र एक प्रतिभाशाली एक प्रतिभाशाली छात्र थे, इसी लिए बाँदा के विद्यालयों में ऐसे छात्रों की जो खोज चल रही थी, उसमें इन्हें चुन लिया गया । देवेन्द्र नाथ खरे ने अपने लेख 'बालक गोविन्द" गुरु की नजर में – ये लिखा है कि "खोज की प्रक्रिया में लगभग 6 माह तक अहापोह की स्थिति में रहकर सतत् निरीक्षण के बाद मैंने निश्चय किया और गोविन्द को अपे प्रियतम छात्र के रुप में अपने अंक में समेट लिया । इसके बाद में उसके विकास की प्रत्येक गतिविधि पर नजर रखने लगा और उसका मार्ग–दर्शन करने लगा । "होनहार विरवान के होत चीकने पात" के अनुसार गोविन्द का विकास दिन दूना रात चौगुना होने लगा क्योंकि पूत के पाँव पालने में ही पहचान लिये गये थे ।[2]

बालक के सफल जीवन और भविष्य के निर्माता माता, पिता और आचार्य होते हैं, क्योंकि ये तीनों ही गुरू माने जाते हैं और तीनों ही पूज्य होते हैं । तीनों ही गुरू गोविन्द के भविष्य निर्माण में सहयोगी सिद्धि हुए । पिता जनक होता है, माता जननी और निर्माता होती है तथा गुरू व्यवस्थापक । नानी की कथा – कहानियाँ परीलोक का सृजन करती है, उसकी अनुभूति ही परीलोक की विभूति बनती है । देखिये –

---

1. गोविन्द मिश्र – सृजन के आयाम – सम्पा. चन्द्रकान्त बांदिवडेकर – पृष्ठ 9
2. वही पृष्ठ 9–10

नानी की कहानियों की जो अमिट छवि बालमन में अंकित हुई, वही छवि गोविन्द की पूँजी बनी ।[1]

"लेखक की जमीन" में माधुरी छेडा से हुए साक्षात्कार में गोविन्द ने अपनी शैशव कालीन कालीन पारिवारिक परिस्थिति का भी उल्लेख किया है । अन्तरंग सम्बन्धों पर प्रकाश डालते हुए गोविन्द मिश्र ने उत्तर में कहा – "क्योंकि माहौल वैसा नहीं था । लड़ाई–झगड़ा हमारे यहाँ बहुत होता था अड़ोस–पड़ोस में, माँ बाप में । पिता माँ को बहुत मारते थे । अभी भी समस्या है । पिता जी बुजुर्ग हैं, उनको अकेले नहीं छोड़ा जा सकता ।[2]

इस प्रकार गोविन्द मिश्र की बाल्यावस्था जहाँ आर्थिक अभाव और पारिवारिक कलह में बीती, वहीं गुरू एवं [illegible] जनों के स्नेहपूर्ण वातावरण ने उन्हें संघर्षशील रहने का मार्ग दर्शन करते हुए योग्य भी बनाया । इसी कारण ये 14–15 वर्ष की अवस्था से ही कहानी लेखन में प्रवृत्त हो गये थे ।

अपने बचपन के बारे में पूछे जाने पर वे डॉ0 माधुरी छेड़ा को बताते हैं –

"मेरा ख्याल है मैं बुजुर्ग जल्दी ही हो गया था । घर में सबसे बड़ा था और मैंने कहा न माँ–बाप की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी, तो एम0ए0 करते ही इधर साढ़े उन्नीस साल में शादी हुई और एम0ए0 में निकलते ही मैं लैक्चरर हो गया । उन दिनों बड़ा अच्छा माहौल था देश का । अच्छे प्रोफेसर्स थे, अच्छे टीचर्स थे । ज्ञान या शिक्षा के स्तर की कद्र थी । .... जब आप बड़े होते हैं तो पहली ललक यह थी कि पहले पहले आप माँ–बाप का बोझ उठायें । मेरी तीन बहने हैं । बड़ी बहन की तो शादी हो चुकी थी, बाकी दो बहने और एक भाई । तो उन भाई बहनों को जितना पढ़ाने का था, वह मैंने जिम्मेदारी ली । पढ़ाया, दो बहनों के विवाह में मैंने खाली भूमिका निभायी ।[3]

---

1. गोविन्द मिश्र – सृजन के आयाम–सम्पादक–चन्द्रकांत बांदिवडेकर–पृ0 9–10.
2. लेखक की जमीन–पृ0 90.
3. लेखक की जमीन- पृ0 90.

शिक्षा एवं दीक्षा :

सुशिक्षित माता-पिता का पुत्र होने के नाते शिक्षित पारिवारिक वातावरण का प्रभाव प्रतिभाशाली गोविन्द पर पड़ना स्वाभाविक था । आर्थक अभाव होते हुए भी गोविन्द ने अपनी पढ़ाई सुचारू रूप से चलाये रखी । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है कि गोविन्द मिश्र की प्रारंभिक शिक्षा पुरानी स्टेट चरखारी में जो आजकल हमीरपुर जिला में है और माध्यमिक शिक्षा बाँदा में हुई । स्नातक और स्नातकोत्तर शिक्षा इलाहाबाद में सन् 1959 में अंग्रेजी साहित्य में एम0ए0 किया ।[1]

इनके विद्यार्थी जीवन के कुछ संस्मरण इनके गुरू देवेन्द्रनाथ खरे ने इस प्रकार प्रस्तुत किये हैं – 'शिष्य की सबसे बड़ी विशेषता जिज्ञासा शान्ति के लिए शिक्षक का अभाव गोविन्द में थी और मैं स्वंय अधिक से अधिक देने की गुरूवृत्ति में सम्पृक्त था । दोनों का ही मणि-कांचन संयोग हो गया ।

मेरे विद्यालय डी0ए0वी0 से ही आठवीं कक्षा उत्तीर्ण कर गोविन्द नवीं कक्षा में आया तो मेरे और भी निकट आ गया । कक्षा में 8 प्रतिभाशाली और परिश्रमी छात्र थे, जिन्हें हाईस्कूल परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त हुई । उसके पहले ही नवीं कक्षा की वार्षिक परीक्षा में गोविन्द का पॉचवा स्थान था । परीक्षा फल बना ही था कि मेरे मुंह से निकल गया, गोविन्द बोर्ड की परीक्षा प्रथम रहेगा । * * * * भविष्य वाणी फलीभूत हुई ।

उन दिनों परीक्षा में नकल करने की प्रवृत्ति तो थी नहीं, इसलिए हाईस्कूल परीक्षा के अंग्रेजी द्वितीय प्रश्न पत्र में ""इण्डियन फार्मर"" विषय पर अंग्रेजी में निबन्ध लिखते समय फार्मर की स्पेलिंग Farmar लिखते रहे और कक्ष निरीक्षक के संकेतों पर कोई ध्यान नहीं दिया, फिरभो विषय में 100 में से 74 अंक प्राप्त किए ।

राजकीय इंटर कॉलेज से इंटरकरने के बाद गोविन्द आगे की पढ़ाई के लिए इलाहाबाद विश्वविद्यालय चला गया । और वहाँ से अंग्रेजी में एम0ए0 किया ।[2] बी0ए0 स्तर तक संस्कृत ही

---

1. लेखक की जमीन – पृ0 90.
2. गोविन्द मिश्र – सृजन के आयाम–पृ0 11–12 पर आधारित ।

इनका विषय रहा और आगे भी संस्कृत का स्वाध्याय जारी रहा । एक साक्षात्कार में इन्होंने बताया भी है[1]..... "बी0ए0 में मैंने संस्कृत ली थी और यूनीवर्सिटी में जो मेरा घनिष्ठ दोस्त था – रणजीत सिंह, उसने एम0ए0 में संस्कृत लिया । तो संस्कृत भी मेरे साथ बराबर रही । इसका मुझे बड़ा लाभ हुआ । अब मैं संस्कृत के ज्ञान को बढ़ा रहा हूँ ।

विवाह :

गोविन्द मिश्र का विवाह लगभग साढ़े उन्नीस वर्ष की अवस्था में ही भारतीय परम्परा के अनुसार हो गया था । भारतीय परम्परा से अर्थ है इनके माता–पिता की इच्छानुसार ही इनका विवाह हुआ था, न कि इनकी इच्छा या पंसद से । इनका विवाह तब हुआ जब ये एम0ए0 फाइनल की कक्षा में पढ़ते थे । इस मत की पुष्टि इस साक्षात्कार से होती है - डॉ0 माधुरी छेड़ा से वार्तालाप के कुछ अंश गोविन्द – जैसे मेरी शादी ही साढ़े उन्नीस साल में हो गई ।

माधुरी – .अच्छा ।

गोविन्द – कुछ यह, ...कुछ यह कि हमारे माँ बाप ने बहुत ही कष्ट से हम लोगों को पढ़ाया था, ...हब अगर इनकी इच्छा थी मेरे विवाह की, तो चलिए हो जाए ।" [2]

इसी साक्षात्कार में डॉ. माधुरी पुनः जानना चाहती हैं कि

माधुरी – "आपका विवाह तो भारतीय परम्परा के ही अनुसार हुआ । वह आरोपित विवाह था या आपकी पसन्द का था ?

गोविन्द - नहीं, पसन्द का नहीं था, पर आरोपित भी कहना मुश्किल है ।

गोविन्द – कहाँ तक विवाहित जीवन से सन्तुष्ट हैं या विवाह के समक्ष कोई और भी थर्ड पार्टी भी उपस्थित थी ?

---

1. लेखक की जमीन – पृष्ठ 95
2. लेखक की जमीन – (जब जैसे जो होता चला) – पृष्ठ 89

गोविन्द– हाँ वह सब था, लेकिन मैंने कहा न, कि मैं अपने माँ–बाप को जिन्होंने परिवार के लिए इतना कष्ट उठाया था, उन्हें ठेस नहीं पहुंचाना चाहता था । वह लड़की जो मेरी सहपाठिका थी, थोड़ रईस घर की थी । उसके लिए भी वहीं समस्या माँ–बाप वाली थी । ऊपर से पिता दिल के मरीज थे । हमारे जैसे साधारण परिवार से रिश्ता सोचा ही नहीं जा सकता था उनके यहाँ । सबसे बड़ी बात कि हम दोनों ही उस समय कस्बई मानसिकता के थे, जिसमें बलिदान की भावना ज्यादा, हथियाने की कम होती है पर अपने विवाह को आरोपित भी नहीं कहूंगा मैं । यह स्वतंत्रता थी मुझे कि मैं न होने देता विवाह । अब सन्तुष्ट ..... तो मेरी अपेक्षाएँ अपने वैवाहिक जीवन से सभी बहुत रही नहीं । इसीलिए मैं बहुत निराश हुआ नहीं कभी ।

इस प्रकार इनका विवाह हो तो गया, परन्तु वैवाहिक जीवन में पूर्ण मधुरता दृष्टिगत होती, और कोई खास असन्तोष भी नहीं झलकता है । पत्नी पारिवारिक स्थिति से अवश्य ही कुछ असन्तुष्ट दिखलाई देती है, देखिये –

"मुझे तो घर से कोई निराशा नहीं होती, पर पत्नी को होती रही है । कभी–कभी निराशा इस बात से ही हो जाती है कि आपके पति के जीवन में दूसरे व्यक्ति आये या हैं । तो कहाँ थी मैनें मान लिया और अपने अन्त:करण के लिए जितना मैं कर सकता हूँ करता हूँ, उसके बाद मेरे वश में नहीं है । आप पूरी तरह से किसी को भी, अपने बेटे या माँ-बाप को भी खुश नहीं कर सकते । तो यह एक सीमा है जिसे मैं स्वीकार कर लेता हूँ कि उन्हें जो एक असन्तोष है वह रहेगा ।[2]

साहित्य सर्जन :

साहित्य-सृजन की शक्ति अद्वितीय प्रतिभा को ही परिणाम होती है । अग्निपुराण में कहा गया है कि –

---

1. लेखक की जमीन – पृष्ठ 94, 95
2. वही पृष्ठ 95.

"नरत्वं दुर्लभं लोके शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा ।
× × × × कवित्वं तत्र दुर्लभम् ।।

अर्थात लोक में संसार में मनुष्य का जन्म अति दुर्लभ है, उसमें भी प्रतिभा शक्ति और उसमें कवित्व शक्ति अर्थात् साहित्य सृजन की शक्ति । इसके अतिरिक्त कवि अपने रचना जगत का स्वयं विधाता होता है, जैसा उसे अच्छा लगता है, वैसा ही साहित्य रचता है कहा भी है –

अपरि काव्य संसारे कविरेव प्रजापतिः
यथास्ये रोचते विश्वं, तथेदं परविर्तते ।।"

लेखक गोविन्द मिश्र की बचपन से ही साहित्य में रूचि देखी जा सकती है । जब वे इण्टर मीडिएट कक्षा के छात्र थे तभी दोतीन कहानियाँ लिखीं यथा – "पर मेरे आराध्य न आये", "पूर्णमासी का भोग", "चन्दनिया अरज करै"। "पुनः बी.ए. कक्षा के विद्यार्थी जीवन में हॉस्टल (छात्रावास) की एक पत्रिका के लिए एक कहानी लिखी । बी.ए. तक और उसके बाद संस्कृत साहित्य के अध्ययन में रूचि होने के कारण ये नित्य उसका अध्ययन किया करते हैं । बाल्मीकि रामायण और महाभारत, भागवद् गीता और भगवत पुराणादि का अध्ययन निरन्तर चलता रहता है । एक साक्षात्कार (माधुरी छेड़ा से बातचीत) में इन्होंने कहा भी है –

"हॉं, बाल्मीकि रामायण, महाभारत बार–बार, रोज–रोज पाठ । सरल संस्कृत है इनमें ।[1]

इस प्रकार अंग्रेजी और संस्कृत साहित्य का अध्ययन एवं ज्ञान होने के फलस्वरुप इनकी साहित्य के प्रति अभिरुचि दृष्टिगत होती है ।

गोविन्द जी ने हिन्दी गद्य की दो ही विधाओं को विशेषकर चुना है –
1. कहानी और 2. उपन्यास । यों तो कुछ कविताएँ भी लिखीं थीं, एक–दो निबन्ध–संग्रह भी हैं, किन्तु प्रमुखता कहानी और उपन्यास लेखन को ही दी है । इस बात को स्वीकारते हुए उन्होंने विभिन्न लोगों के साथ हुए साक्षात्कार में स्पष्ट कहा है–लोठरि लूट्से के साथ बातचीत)

---

1. लेखक की जमीन – पृष्ठ 95 से

थोड़ा सा मैं अपने लेखन का कैरियर बता दूँ तो शायद बात साफ हो सकेगी । दो–तीन कहानियाँ मैंने चौदह वर्ष की उम्र में, जब मैं इण्टरमीडिएट में पढ़ता था तब लिखीं थी, बहुत ही भावुक किस्म की थीं । इसके बात मैंने सन् 63 में लिखना शुरू किया । दो–तीन साल तक कहीं कुछ छपता नहीं था । फिर एकाएक मुझे एक दिन पत्र मिला कि मेरी कहानी नये पुराने माँ–बाप एक पत्रिका बालकृष्ण राव जी निकालते थे, माध्यम उसी में स्वीकृत हो गयी ।[1] मुझे बहुत खुशी हुई । विनय दास जी के साथ वार्तालाप में आपने बताया है कि 'मैंने शुरू में कविताएँ भी लिखीं, लेकिन धीरे–धीरे आपको लगने लगता है कि आपके व्यक्तित्व की किसी एक खास विधा से ताल-मेल बैठ गया है । * * * मैं स्वयं को उपन्यास और कहानी के ज्यादा करीब पाता हूँ

आगे पुनः कहते हैं – कविता में जो बात होती है, वह कहानी में मुझे नहीं मिल पाती । मसलन भावना का पूरा वीणा और वेग का पूरा इम्पैक्ट जो कविता में सीधा–सीधा आता है, वह शायद किसी भी विधा में नहीं आता । इसलिए कविता पढ़ना अच्छा लगता है । रही बात अपनी कविताओं के छपवाने की तो मैं नहीं समझता कि वे बहुत अच्छी कविताएँ हैं । मैं समझता हूँ कि कुछ ऐसी चीजें होनी चाहिए जिन्हें आप सिर्फ अपने लिए रखें ।[2]

ऐसा ही कुछ विचार अरविन्द एवं मंजुश्री के साथ हुए वार्तालाप में प्रगट होता है ।[3]

गंगा प्रसाद जी के साथ हुए साक्षात्कार में भी यही तथ्य विखर कर सामने आता है कि कहानी लेखन की प्रक्रिया 14 वर्ष की अवस्था से ही प्रारम्भ हुई और 1963 से विधिवत् साहित्य सर्जन में संलग्न हो गए ।[4]

डॉ. चन्द्र कान्त वांदिवडेकर के समक्ष भी यही बात स्वीकार की है ।[5]

---

1. लेखन की जमीन – पृष्ठ 14
2. वहीं पृष्ठ 24
3. वही पृष्ठ 37
4. वहीं पृष्ठ - 48–49
5. वही पृष्ठ 81

कविता त्रिवेदी के साथ हुई बातचीत (पुनश्च) में अपने साहित्य-सर्जन की ओर बढ़ते कदमों के बारे में प्रकाश डालते हुए गोविन्द मिश्र ने कहा है –

14–15 वर्ष की उम्र में जब मैं इण्टर में था तब चार–पाँच कहानियाँ लिखीं । तब उपन्यास लिखने के सपने भी देखने लगा था । अपने एक साथी से कह बैठा तो उसने मजाक उड़ाया – आसान नहीं होता उपन्यास लिखना । आज दिखता है उसने सच कहा था । .....

ये तो सचमुच मैंने नहीं सोचा कि लेखक न होता तो आज क्या होता । पिछले इतने वर्षो से – बल्कि जहाँ तक नजर जाती है, मेरा रवैया एक लेखक का ही रहा है, बचपन जैसा बीता वह भी एक लेखक का ही हो सकता था । लेखक से इतर कभी में देख ही नहीं पाया खुद को ।

लेखक न होता – साहित्यकार से आशय है शायद आपका ....तो मैं क्या होता ? न होऊ तो शायद जीवित भी न रहूँ । मेरी जिजिविषा ही साहित्यकार होने के दम पर है .....अगर संवेदना होती और सिर्फ अभिव्यक्ति न दे पाने का संकट होता ....तो शायद अध्यापक होता । अपनी दबी सर्जनात्मकता की तृप्ति उम्दा पढ़ाकर पाता ।[1]

"साहित्य की आत्मा का बसेरा कहाँ है" शीर्षक साक्षात्कार में राजकुमार गौतम और बलराम ने इनकी साहित्यिक सृजनात्मकता को उजागर करते हुए गोविन्द मिश्र की रचनाओं की ओर संकेत किया है -

".....पिछले लगभग पच्चीस वर्षो में उनकी चर्चित कृतियों – पाँच उपन्यास सात–आठ कहानी–संग्रह, यात्रावृत्त की दो पुस्तकें तथा साहित्यिक निबन्ध की पुस्तक के अतिरिक्त कई अन्य संपादित–संकलित पुस्तकें सामने आ चुकी है । जिस हिसाब से हिन्दी लेखक को उसकी उम्र और रचनाओं की संख्या के तहत नापा जाता है, यह उम्र तथं पुस्तक संख्या पर्याप्त दीख पड़ती है, लेकिन अपनी धाराप्रवाह रचना सक्रियता से गोविन्द मिश्र इस अवधारणा को अपने पास फटकने भी नहीं दे रहे है । [2]

---

1. लेखक की जमीन – पृष्ठ 101
2. वही पृष्ठ – 61

विभिन्न प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित विभिन्न कहानी–संग्रहों एवं उपन्यासों के आवरण पृष्ठों के अन्त में इनकी प्रकाशित रचनाओं का उल्लेख किया गया है । इसके अतिरिक्त 'लेखक की जमीन" नामक साक्षात्कार संग्रह के अन्त में "परिशिष्ट" में इनकी प्रकाशित रचना का नाम, प्रकाशन वर्ष और और प्रकाशक का नाम प्रस्तुत किया गया है । 1965 से अब तक लेखक की निम्नलिखित रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी है –

(क) **कहानी संग्रह** :

1. रगड़ खाती आत्म हत्याएँ,
2. नये पुराने माँ बाप,
3. अन्तःपुर,
4. धाँसू
5. खुद के खिलाफ,
6. खाक इतिहास,
7. पगला बाबा ।
8. आसमान कितना नीला ।

अन्य - मेरी प्रिय कहानियाँ, "अपाहिज" (लम्बी कहानियाँ), स्थितियाँ रेखांकित (60 के बाद की कहानियाँ), गोविन्द मिश्र की प्रतिनिधि कहानियाँ ।

(ख) **उपन्यास** :

1. वह अपना चेहरा,
2. उतरती हुई धूप,
3. लाल पीली जमीन,
4. हुजूर–दरबार,
5. तुम्हारी रोशनी में,
6. धीरे समीरे ।

(ग) यात्रावृत्त :

1. धुन्ध भरी सुर्खी,
2. दरख्तों के पार ...शाम
3. झूलती जड़े ।

निबन्ध :

1. साहित्य का सन्दर्भ,
2. कथाभूमि ।

सर्वविधा संकलन :

"मुझे घर ले चलो" ।

बच्चों के लिए – "कवि के घर में चोर" (–प्रकाशय)

इसके साथ ही अब भी गोविन्द मिश्र साहित्य सृजन में संलग्न है और अपनी कृतियों से हिन्दी साहित्य की विपुल श्री वृद्धि कर रहे हैं ।

नौकरी :

जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है कि गोविन्द मिश्र की पारिवारिक स्थिति ज्यादा अच्छी नहीं थी । इनका परिवार सामान्य श्रेणी का ही परिवार था । आर्थिक संकट का भी सामना करना पड़ा था । इसीलिए इनके सामने यही विकल्प था कि पढ़–लिखकर नौकरी की जाय और पिता का भार हल्का किया जाय । उन दिनों ज्ञान और शिक्षा के स्तर का बहुत सम्मान होता था । योग्य । योग्यतर और योग्यतम युवक को रोजगार मिलना कठिन नहीं था । डॉ.माधुरी छेड़ा के साथ चली लम्बी वार्ता में इन्होंने बताया है .....पढ़ने में मैं अच्छा था, फर्स्ट–वर्स्ट आता था । कुछ अतिरिक्त चीजें भी पढ़ना शुरु हो गयी थीं । क्या विषय आप लेंगे, क्या होगा ....ये रुचि के बजाय इससे ज्यादातय होता था कि आपको नौकरी किससे मिलेगी । मतलब अर्थ से तय होता था।

जैसे हमारे जमाने में इंग्लिश से आप एम0ए0 करिये तो आपको फोरन लैक्चरशिप मिल जायेगी तो मैंने एम0ए0 में इंग्लिश लिटरेचर लिया, क्योंकि नौकरी फौरन चाहिए थी । लेकिन एक बार जब इंग्लिश लिटरेचर लिया तो जैसे बड़ी भारी संसार खुल गया ।"[1]

इंग्लिश लिटरेचर (अंग्रेजी साहित्य) से एम0ए0 उत्तीर्ण करते ही सन् 1959 में ये लेक्चर (प्रवक्ता) नियुक्त हो गए । उस पद पर 1961 तक रहे । तत्पश्चात् 1961 में भारतीय राजस्व सेवा में अधिकारी के पद पर नियुक्त हो गए । गंगाप्रसाद को इन्होंने यह बताया भी है – "1959 में अंग्रेजी साहित्य में एम0ए0 किया, दो वर्षों 59–61 तक प्राध्यापिकी की, पहले गोरखपुर में, बाद में अपने ही जन्म–स्थान अतर्रा डिग्री कॉलेज में । 1961 में भारतीय राजस्व सेवा में हूं ।[2]

अब थोड़ा – सा इनकी सेवा–भावना और अधिकारी के पद की गरिमा पर दृष्टिपात कर लिया जाये । कविता त्रिवेदी से हुई – वार्ता का प्रसंग कविता–आप भारतीय शासन की सिविल सेवा में है । आप इससे सन्तुष्ट हैं या नहीं, यदि हैं तो किस रूप में ? गोविन्द कौन अपनी नौकरी से सन्तुष्ट होता है । फिर प्रशासनिक सेवा में तृप्ति के दो ही पक्ष होते हैं – एक प्रभाव या पावर की तृप्ति, दूसरे अर्थ की तृप्ति ..... और इन दोनों से ही मैं उदासीन रहा आया । शायद ज्यों–ज्यों साहित्य की विराद् दुनियाँ मेरे सामने खुलती गयी ..... वे दोनों ही चीजें मुझे छिछली लगती चली गयीं ।

उपर्युक्त दोनों बातों से विलग में अपने कार्य को विशुद्ध नौकरी के रूप में लेता हूँ। कुछ भी उम्मीदें नहीं पाल रखीं अक्सर मानसिक और शारीरिक थकान होती है तो सोच लेता हूँ, नौकरी अखिल नौकरी है । तनख्वाह भी तो मुझे उसी श्रम की दी जाती है ।"[3]

---

1 लेखक की जमीन – पृ0 95.

2. वही पृ0 48.

3. लेखक की जमीन – पृ0 104.

इस प्रकार श्री गोविन्द जी आज भी भारतीय सेवा में एक उच्च पदाधिकारी के रूप में कार्यरत हैं ।

समग्र रूप से व्यक्तित्व :

गोविन्द मिश्र के व्यक्तित्व को मापने हेतु हमारे समक्ष तीन पैमाने हो सकते हैं; जैसे प्रथम शारीरिक क्षमता द्वितीय धार्मिक विचारधारा और तृतीय साहित्यिक दृष्टिकोण ।

1. **शारीरिक क्षमता :**

"गोविन्द मिश्र – सृजन के आयाम के परिशिष्ट–5 में मिश्र जी के शारीरिक व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला गया है । सम्पादक ने "मैं और मैं" शीर्षक सम्पादित करने से पूर्व ही लिखा है –' "यद्यपि इस संकलन का उद्देश्य व्यक्तित्व का आंकलन नहीं है, फिर भी क्योंकि व्यक्तित्व में से ही सर्जना विस्तृत होती है, इसलिए उसकी एक झलक प्रस्तुत है गोविन्द मिश्र ने ही इस पुराने आलेख के माध्यम से ।"

"गोविन्द जी बाहर से काफी मामूली आदमी हैं ..... साधारण लम्बाई–चौड़ाई, साधारण से नाक–नक्श, साधरणी–सी नौकरी और साधारण सा लेखक भी ..... मतलब उसका सब कुछ मामूली दिखता है । लेकिन ..... और दखिये, यहीं से दिक्कत शुरू हो जाती है ..... दिक्कत जो उसके साथ है ..... वह अपने को तन्दुरूस्त समझता है । (.....)। खुद को खूबसूरत महसूस करते हुए भी उसे देखा जा सकता है –अगर हमेशा नहीं तो लड़कियों को उपस्थिति में तो जरूर ही । नौकरी को लेकर वह हीन भावना से पीड़ित रहता है । इस बारे में लोगों को खाली गलत फहमी है । सोचा जाता है उसे नौकरी का घमंड है जबकि है उलटा ही । अगर कहीं हीन भावना है भी तो वह अपनी नौकरी को लेकर ही । कुंठा नहीं है कि वह ऊंचे क्यों नहीं पहुंचा ..... बल्कि यह कि नौकरी बड़ा ही घृणित काम से है ।[1]

---

1. गोविन्द मिश्र – सृजन के आयाम सम्पा0 चन्द्रकांत वांदिवडेकर – पृ0 370.

इस पंक्तियों में गोविन्द मिश्र के शरीर का रेखा चित्र खींचने की कोशिश की गयी है । मिश्र जी वस्तुतः मध्यम कद के साधारण व्यक्ति हैं । वैसे वे प्रायः नीरोग एवं स्वस्थ रहते हैं । शारीरिक सौन्दर्य भी अच्छा है, रंग कुछ साफ और गेहुंआ – सा है । इसके अतिरिक्त मिश्र जी के व्यक्तित्व में निम्नलिखित गुण और भी दृष्टिगत होते हैं, यथा वे निश्चित मना व्यक्ति हैं, परिश्रमी और लगनशील व्यक्ति हैं । निरन्तर चिन्तनशीन और मननशील रहते हैं । हाँ कुछ मानसिक तनाव से ग्रस्त भी दीख पडते हैं । व्यवहार कुशल भी हैं । प्रमाणार्य कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं – ..... और जिसकी वजह से इसके बारे में गलतफहमियों के शिकार लोग भी आखिर यही कहते सुने जाते हैं कि आदमी बुरा नहीं है पर .....

इस "पर" की वह परवाह नहीं करता ।[1] ..... कभी–कभी यह आदमी दयनीय लगता है । अपने आप से लाचार ..... जैसे इसका अपना आप बेचारे के लिए काफी भारी भी पड़ता हो ..... ।[2]

हमेशा तनाव में रहता है ..... या अपने आप से जूझता हुआ ..... या जिंदगी से झगड़ता हुआ । एकदम शान्त और प्रसन्न इसे कम ही जगहों पर देखा जा सकता है ।[3]

मेहनती इतने कि – "आधी रात को जैसे कब्र से उठेगा और लिखने बैठ जायेगा और फिर सो जायेगा । न रात की तरफ, न सुबह की तरफ ही ।[4]

---

1. गोविन्द मिश्र – सृजन के आयाम सम्पा0 चन्द्रकांत वांदिवडेकर – पृ0 372.
2. वही पृ0 373.
3. वही पृ0 373
4. वही पृ0 374

2. धार्मिक विचारधारा :

बी0ए0 स्तर तक संस्कृत विषय रहने तथा आगे भी इसको अध्ययन के प्रति रूचि रहने के कारण मिश्र जी की वाल्मीकि रामायण और महाभारत जैसे धार्मिक ग्रन्थों का पाठ व अध्ययन करते हैं । इंग्लैंड की यात्रा से वापस आने के बाद पूजा–पाठ भी करने लगे किन्तु धार्मिक कर्मकाण्ड इन्हें ज्यादा पसन्द नहीं है । डॉ0 माधुरी छेड़ा के साथ हुए साक्षात्कार से यह बात स्पष्ट हो जाती है –

"पिताजी के धर्म ने मुझे बहुत प्रभावित नहीं किया । कर्मकाण्ड ज्यादा । सिर्फ अपने मोक्ष के लिए काम करना था, मृत्यु के उपरान्त आपको अच्छा जन्म मिले । मुझे लगता है ये विरोधाभास है । एक स्तर पर तो आप अपनी पत्नी पर अत्याचार करें और दूसरे स्तर पर आप अपने मोक्ष के लिए ..... यह स्वार्थ है । धर्म वह है जो आपके पूरे जीवन को अनुप्राणित करे, आपकी संवेदना, सहानुभूति को विस्तृत कर दे, आपको और मानवीय बनाये ..... तभी तो । बाहरी धर्म अज्ञानी लोगों को बाँधता है । उससे शक्ति भी मिलती है उन लोगों को – "धीरे समीरे" – उपन्यास में इसी द्वंद्व से टकराने की कोशिश है ये क्या बिल्कुल बेकार की चीजें होती हैं ? कृष्ण और राधा, मंदिर में घंटी बज रही है, आरती हो रही है वहाँ आप भी खड़े हैं तो आप भी हाथ जोड़ देते हैं । हिन्दू समाज में धर्म आपके इर्द–गिर्द ही रहता है । लेकिन वह आपके जीवन का हिस्सा कैसे और किस स्तर का हो यह सोचने की बात है, और यह सोचना मेरा पहले से नहीं, हाल ही में शुरू हुआ है । इसको समझने और फैलाने के लिए ही मैंने धीरे–समीरे लिखी, एक तरह से । इतना तो मैं समझ गया हूँ कि धर्म को आप खारिज नहीं कर सकते । ये आपके जीवन को विस्तार देता है, निश्चितता देता है । संसार और ब्रह्माण्ड जो हैं, वह कोई पागल का प्रलाप जैसी चीज नहीं लगता । उसका भी कोई खास प्रयोजन है, उसमें एक लय है । मूल्यों से हम भाग नहीं सकते और ईश्वर का तो मूल्य नहीं – महामूल्य है । महामूल्य में आपकी प्रतीति हुई तभी आप और मूल्यों में ..... जैसे अगर ईश्वर को नहीं मानते तो फिर सच बोलने और झूठ बोलने में क्या फर्क है । दूसरे को सताने और न सताने में कोई फर्क ही नहीं है,

कुछ भी करते रहिए । पूजा–पाठ भी जरूरी है अगर वो आपके इस भाव को ढ़ढ़ करे कि वह जो ब्रह्माण्ड है, इतनी बड़ी जो कृति है, कोई कृतिकार है इसका । इस बड़ी कृति से अपना भी कोई रिश्ता है । यह प्रतीति स्फूर्ति देती है कि आप अलग–थलग नहीं है, जुड़े हुए हैं पूरे ब्रह्माण्ड से । लेकिन अगर धर्म को मानवता से अलग आप देखेंगे तो वह धर्म नहीं है । आप पूजा पाठ करते हैं तो आपके अन्दर करूणा इतनी बढ़ जानी चाहिए कि आप सबके प्रति दयावान हो जायें, नहीं तो बेकार । अगर धर्म आपको संकुचित बनाये, संकीर्ण बनाये तो वह तो धर्म नहीं है । धर्म आपको निश्चित ही उदार, बहुत उदार, बहुत विस्तृत बहुत बड़ा बनाता है । मैं इस तरह के धर्म का हिमायती होना चाहता हूँ ।[1]

मात्र इसी साक्षात्कार वार्ता में मिश्र जी का धार्मिक उदारवादी दृष्टिकोण प्रतिबिम्बित हो रहा है । वे मानवीयता से ओत–प्रोत धर्म में हिमायती हैं । ब्राह्माडम्बर और दिखावा सब ढोंग है, वह धर्म नहीं हो सकता । धर्म में नैतिकता, सत्यता, उदारता और दयाभाव होना चाहिए कथनी और करनी एक हो अन्यथा सब व्यर्थ है ।

3. साहित्यिक दृष्टिकोण :

साहित्यिक दृष्टिकोण से गोविन्द मिश्र के व्यक्तित्व और उनकी रचनाशीलता की समीक्षा करते हुए डॉ0 भगवानदास वर्मा ने लिखा है कि – मिश्रजी की रोमानी दृष्टि जैसा कि वे कबूल करते हैं, विक्टर युगों की रोमानी दृष्टि है जिसमें स्थितियों से पलायन नहीं, पर उन्हीं के मध्य सृजनशील संभावनाओं की तलाश है ।[2]

गोविन्द मिश्र का दृष्टिकोण है कि "लेखक का जहाँ तक अपनी रचना से रिश्ता होता है, वहाँ एक तो जो भोगा हुआ है, उसका या जीवन का महत्व है । जिस चीजों ने उसे बहुत करीब से छुआ होगा, उनमें ज्यादा ताकत आयेगी, ज्यादा प्रवाह होगा, ज्यादा वेग होगा, तनाव भी एक दम सीधा–साधा उतरेगा । लेकिन जिन कहानियों में उसका ताल्लुक

---

1. लेखक की जमीन – पृ0 97.
2. गोविन्द मिश्र, सृजन के आयाम – पृ0 30.

स्थितियों से या तनाव के मुद्दों से उतने पास का नहीं है, वह बहुत मेहनत करे तो शायद अच्छी कहानी बन जाए, फिर भी वह ताकत नहीं आती । तो यह महत्व की बात तो हे, लेकिन यहीं तक है ।"[1]

उपन्यास और कहानी के सम्बन्ध में मिश्र जी का मत है कि लेखक के लिए उपन्यास एक बहुत बड़ा चैलेंज होता है क्योंकि उपन्यास एक बहुत बड़ा कैनवस लेखक को देता है, जिन्दगी को उठाने के लिए । लिखना तो उपन्यास हर लेखक चाहता है शुरू से । कहानियाँ उसे तैयार करती हैं उपन्यास लिखने के लिए ।

गोविन्द जी मानते हैं कि साहित्य गतिशील चेतना है । साहित्य को नहीं रूकना चाहिए, क्योंकि साहित्य से सरोकार नहीं मर सकते । वही आदमी की भावनाएँ है, संवेदनाएं माँ–बाप, प्रेम, समाज, समाज का संघर्ष, आर्थिक दवाब आदि नहीं रहते हैं । लेकिन हर पीढ़ी की संवेदनात्मकता इन्हीं चीजों को नये नजरिये से देखती है और अगर वह पीढ़ी तेजी से रिऐवट करती है तो साहित्य में वह दृष्टिगोचर होना चाहिए ।

भले ही और चीजें रूकी हुई हों, अगर देखा नहीं होता है तो इसका मैं एक ही निष्कर्ष निकालूंगा कि कहीं हमारी संवेदना घिसती जा रही है । महसूस करने की जो हमारी ताकत है, वह कमजोर होती जा रही है ।[2]

लेखक की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए वे कहते हैं कि किसी सही लेखक की भूमिका समय से बँधी नहीं होती, ... बड़ा लेखक होगा, बड़ी रचना से, जो अपने समय की होते हुए भी समय की सीमाओं को लाँघ जाती है ।[3]

---

1. लेखक की जमीन – पृ0 14.
2. लेखक की जमीन – पृ0 45.
3. वही पृ0 50.

इस प्रकार गोविन्द मिश्र का साहित्यिक व्यक्तित्व स्वंय में पृथक हैं, निराला है । वे किसी समय भी सीमा में बँधकर नहीं रहना चाहते, न साहित्य को ऐसा होना चाहिए । साहित्य तो गतिशील होता है । साहित्य ही समाज का दर्पण होता है क्योंकि उसमें समाज का यथार्थ रूप प्रतिबिम्बित होता है । इसके अतिरिक्त गोविन्द जी की दृष्टि रोमानी दृष्टि भी है।

निष्कर्ष :

उत्तर प्रदेश राज्य के बाँदा जिले के अन्तर्गत अतर्रानामक स्थान (कस्बा) में 1 अगस्त 1939 को जन्मे गोविन्द मिश्र ने आर्थिक अभावों में एम0ए0 तक शिक्षा प्राप्त की थी । 1959 में अंग्रेजी साहित्य विषय से एम0ए0 करते ही ये प्रवक्ता बन गये । दो वर्षों तक अध्यापन करने के बाद 1961 में भारतीय सिविल सेवा में राजस्व विभाग में पदाधिकारी नियुक्त हो गये, तभी से आप भारतीय सेवा में कार्यरत हैं । आप अच्छे लेखक भी हैं । साढ़े उन्नीस वर्ष की आयु में ही विवाह हो गया था ।

आपने 14–15 वर्ष की आयु से ही कहानी लिखना शुरू कर दिया था । 1963 के बाद लिखने की प्रक्रिया गति पकड़ती गई । कुछ कहानियाँ "सारिका" जैसी पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुई । सम्प्रति इनके 6 उपन्यास, 8 कहानी संग्रह, 3 यात्रावृत्त, 2 निबन्ध संग्रह और 1 सर्वविधा संकलन प्रकाशित हो चुका है ।

मिश्रजी साधारण श्रेणी के परिवार वाले साधारण व्यक्ति ही हैं । ठेठ गांव का निवासी जैसा होने के कारण इन्हें बहुत कुछ जीवन अनुभव भी है । मानव–धर्म के पक्षपाती हैं, दिखावा के नहीं, साहित्य के क्षेत्र में ये कहानीकार और उपन्यासकार के रूप में ही ख्याति प्राप्त कर चुके हैं ।

* *
* * *